ISSN 2231-5063 Impact Factor : 3.4052(UIF) Volume - 5 | Issue - 10 | April - 2016

Golden Research Thoughts

GRT

हिंदी संत काव्य में जीवन मूल्य

प्रा.भगवान आदटराव
संतोष भीमराव पाटील महाविद्यालय, मंद्रुप,तहसील- द. सोलापुर,जि- सोलापुर.

प्रस्तावना :

शब्दकोश में मूल्य का अर्थ है, "वह गुण अथवा तत्त्व जिसके कारण किसी वस्तु का मान या महत्त्व होता है।" मनुष्य के संदर्भ में ऐसे गुण या तत्त्व जिन्हें जीवन में उतारने पर जीवन का मान या मूल्य बढ जाए जीवनमूल्य है।

भारतीय संस्कृति में जीवन की ओर उदात्त दृष्टि से देखा गया है। जीवन को यज्ञ कहा है। इस यज्ञ में षडरिपुओं की आहुति देने से जीवन उदात्त बन जाता है। इसीएि प्राचीन काल से धार्मिक और नैतिक शिक्षा के मध्यम से जीवन मूल्यों का संस्कार किए जाते थे।

मनुष्य में गुणदोषों का मिश्रण होता है। गुणों का सवर्धन और दोषों का निर्मूलन आवश्यक है। पत्थर पर संस्कार करने से उसे जब मूर्ति क रूप दिया जाता है, तब लोग उसके सामने श्रध्दा से नतमस्तक होते हैं। रास्ते पर पडा संस्काहीन पत्थर लोगों क ठोकरें खात फिरता है। संस्कारों से पत्थर का भविष्य बदल जात है तो मानव जीवन भी निश्चित ही बदल सकता है। इस संदर्भ में रहीम का यह दोहा विचारणीय है-

"जो नर उत्तम प्रकृति का, का कर सकत भुजंग।
चंदन विष व्यापत नहीं, लिपटे रहत भुजंग।"

युग परिवर्तन के साथ मूल्य बदलते हैं। मगर कुछ मूल्य शाश्वत होते हैं। ये मूल्य समाज का मार्गदर्शन करते हैं। व्यक्ति पर नियंत्रण रखते हैं। अत: हर युग में इन मूल्यों पर संस्कार होना आवश्यक है। भक्तियुग में प्रतिभा संपन्न कवियों, लोकरूचि का संस्कार करनेवाले संतों एवं भक्त कवियों की ऐसी परंपरा चली जिनके साहित्य में भारतीय संस्कृति, सभ्यता, दर्शन, आचार-विचार आदि पूर्णत: सुरक्षित रहें। लोकनायक तुलसीदास ने राम में शील, शक्ति और सौंदर्य का समन्वय किया। सूरदास ने कृष्ण के लोकरंजनकारी रूप द्वारा प्रेम और विश्वास का संदेश दिया। कबीर तथा निर्गुण संतों ने ईश्वर प्रेम को प्राणि मात्र के प्रति उन्मुख कर प्रेम का दायरा विश्वव्यापी बनाया। भक्ति साहित्य 'स्वामीन् सुखाय' नहीं है। स्वान्त:सुखाय के दायरे से निकलकर यह साहित्य सबके लिए कल्याणकारी सिध्द हुआ है।

हिंदी संत काव्य में अभिव्यक्त प्रमुख जीवन मूल्य :-

सत्संग :

भक्ति साहित्य में सत्संग का महत्व अनेक उदाहरणों द्वारा व्यक्त हुआ है। सत्संगति जीवन के लिए वरदान तो कुसंगति अभिशाप की तरह होती है। साधु संतों की संगति में जीवन के सारे दु:ख, दर्द, चिंता, व्याधियाँ नष्ट हो जाती हैं। दुर्जनों का साथ कदम-कदम पर संकटों का निर्माण करता है।

"कबीरा संगति साधु की, हरे और की व्याधि।
संगति बुरी असाधु की, आठों प्रहर उपाधि।।"

भिन्न भिन्न संगति का परिणाम कैसे होता है, इसका सुंदर उदाहरण देखें-

"सीप गयौ मोती भयौ, कदली गयौ कपूर।
अहिमुख गयौ तो विष भयौ, संगति के फल सूर।।"

स्वाति नक्षत्र की बूँद सीपी में मूल्यवान मोती, कर्दली में कर्पूर तो साँप के मुँह में विष बनती है।

परोपकार :

'परोपकरार्थ इंद शरीरम्।' परोपकर ये एक उच्च कोटि की भावना है। परोपकार की विश्वव्यापी भावना का अनुपम चित्रण कबीर के निम्न दोहे में हुआ है-

"वृक्ष कब हुँ नहिं फल भखै, नदी न संचै नीर।
परमारथ के कारणे, साधुन धरा शरीर।"

रहीम ने परोपकार से मूँह मोडनेवालों को जीते जी मृतक कहा है। परोपकार में हमारा शरीर चंदन की तरह घिस जाना चाहिए।

समय का महत्त्व :

क्षण त्यागे कुतो विद्या, क्षण त्यागे कुतो धनम्।' मानव जीवन में समय का बडा महत्त्व है। समय गँवाने पर हाथ कुछ नहीं आता। महात्मा कबीर हमें समय के प्रति सचेत करते हैं-

"कल करे सो आज कर, आज करे सो अब।
पल में परलय होइ रे, बहुरि करोगे कब।"

रहीमदास समय के प्रति अत्यंत सतर्क थे। धन, सम्पत्ति, समादर, सत्त्व आदि बहुमूल्य बातें पुन: प्राप्त की जा सकती है, परंतु बीता क्षण हाथ आना असंभव है। समय चूक से उत्पन्न पश्चात्ताप हृदय को जीवन भर काटता रहता है-

"समय लाभ सम लाभ नहिं, समय चूक सम चूक।
चतुरन चित्त रहिमन लगी, समय चूक ही हूक।।"

समय की पूजा ईश्वर की पूजा है। समय के सदुपयोग से मनुष्य का शारीरिक, मानसिक तथा बौध्दिक विकास होता है।

समता :

समता समाज के सौंदर्य का प्राणतत्त्व है। विषमता समाज पर कोढ़ है। इस कोढ़ ने समाज को जर्जर बना दिया है। संत कवियों ने जाति-पाति, ऊँच-नीच भेदभाव मिटाने के प्रयत्न किए। स्पृश्य, अस्पृश्य, छुआछूत के भ्रम को वैज्ञानिक दृष्टिकोण से परोपकार में शरीर मोमबत्ती की तरह गल जाना चाहिए। गल जाने पर मोम शेष रहता है। चंदन घिस घिस स्वयं समाप्त होता है पर दूसरों को शीतलता, सुगंध देता है, दूसरों की व्याधि हर लेता है। सचमुच तुलसीदास का यह कथन अक्षरश: सत्य है-

"परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
पर -पीडा सम नहिं अधमाई।।"

वाणी का महत्त्व :

भक्ति साहित्य में वाणी का सामर्थ्य स्पष्ट हुआ है। खाते समय में जीभ पर नियंत्रण नहीं रखा तो वह अनेक रोगों को आमंत्रित करती है। भाषा के क्षेत्र में नियंत्रण नहीं रखा तो मानवीय संदर्भों में दरार निर्माण करती है। वाणी सुई का काम करके दिलों को प्रेम के धागे में बाँधती है, तो वह तलवार का काम कर दिलों को तोड भी सकती है। हमारी वाणी मीठी होनी चाहिए, जो हदय से निकली हो। कबीर कहते हैं-

"ऐसी वाणी बोलिए मन का आपा खोय।
औरन को सीतल करें, आप सीतल होय।।"

रींग मास्टर बनकर, हाथ में छडी लेकर जो काम नहीं बनता वह 'ढाई आखरवाली' वाणी से बनता है। तुलसीदास भी इस बात को अच्छी तरह जानते थे।

"तुलसी मीठे बचन से सुख उपजात चहुँ ओर
वशीकरण इक मंत्र है, परिहर वचन कठोर।।"

शील :

शीलं परं भूषणम्। शील रक्षण तथा संवर्धन के संस्कार भक्ति साहित्य में पाए जाते हैं। जायसी के पद्मावत में रत्नसेन की मृत्यु के पश्चात पद्मावती और नागमती दोनों शील रक्षा के लिए जौहर करती है-

सर्वधर्म समभाव :

निर्गुण संत कवियों ने हिंदू-मुसलमानो में जो भेद था, संघर्ष था, उसे मिटाने का प्रयत्न किया। दोनों में सुलगती द्वेषग्नि की भयानकता से कबीर हमें सावधान करते हैं। उन्होंने दोनों धर्मों में प्रचलित बाह्यचारों की खबर जरूर ली, पर उस पर 'ढाई आखरवाले प्रेम की पताका भी फहराई है। सर्वधर्म समभाव के क्षेत्र में सूफी संत भी पीछे नहीं थे। उन्होंने भारतीय लोककथाओं के माध्यम से अलौकिक प्रेम की व्यंजना की। हिंदू-मुस्लिम संस्कृति में मेल करने का प्रयत्न किया। तुलसीदास का चरम आदर्श है। जॉर्ज ग्रियर्सन को यह देखकर आश्चर्य हुआ था कि, उत्तर भारत में 'रामचरित मानस' का जितना प्रचार है, उतना इंग्लैंड में बाइबिल का भी नहीं। भक्तिकाव्य में इन मूल्यों के अतिरिक्त अन्य जीवनमूल्यों की भी अवधारणा हुई है। रहीम की सतसई तो जीवनमूल्यों से भरी हुई है, जो मानव को आदर्श की ओर उन्मुख करती है।

आज संसार में नेता, इंजीनियर, डॉक्टर, वकिल आदि बडी मात्रा में तैयार हो रहे हैं। मगर इस भीड में मानव कहाँ है? आज विज्ञान ने इतनी समृध्दि की है कि वह शापवत् सिध्द हो रही है। विज्ञापन ने उपभोक्तावादी संस्कृति को जनसाधारण तक पहुँचा दिया है। प्रसार माध्यम कुसंस्कारों का बीजारोपण कर रहे हैं। ऐसी परिस्थितियों में भक्ति साहित्य में अभिव्यक्त जीवनमूल्यों का पुनर्विचार होना आवश्यक है। इतिहास केवल गढे हुए मुर्दे उखाडना नहीं है। उसके आलोक में वर्तमान को सुधारकर भविष्य को सँवारना है। मनुष्य को अन्नमय कोश से अनंदमय कोश तक ले जाने के लिए इन शाश्वत मूल्यों के संस्कार बचपन से ही बालक के मन पर होना आवश्यक है। परिवार, पाठशालाएँ, महाविद्यालय, समाज सभी संस्कार केंद्र बने जाने चाहिए। तभी हम ज्ञान- विज्ञान के दो पंखों से भविष्य में सफल उडाने भर सकते हैं।